हम पे घड़ा मिसुर कौ कहिए तुम पे घट मेहतर कौ... ?

जितेन्द्र विसारिया

हिन्दी ADDA

हम पे घड़ा मिसुर कौ कहिए तुम पे घट मेहतर कौ...?

बात को ऐसे पर लगे, देखते-सुनते तीनों लोक में फैल गई। सातौं जात के जनीमद्द में सनाका खिंच गया कि - 'हरदेव पुरोहित की बहू और चप्पा मेहतर के घर सें, बहनें-बहनें हैं!!!'

उधर जग्गा पर बोए माता के जवारों में झाँकी और भजन-अचरियों के बाद, हुलासी भगत, देवी जागरण में रानी तारामती की कथा कह रहे थे - 'सारी अजुद्धया नगरी में शोर मच गओ, रानी तारामती औेर रुक्मिन भंगिन बहनें-बहनें!!!'

- 'कैसे**?**' गाँव में हर एक के जुबान पर एक ही सवाल था।

- 'कैसे?' पुजारी के कथा प्रारंभ करते ही जिज्ञासु भक्तों के जिह्वा पर भी यही प्रश्न नाच उठा था।

रात के कोई तीन-साढ़े तीन बज रहे होंगे। अँधेरी रात में गाँव जब अपने संपूर्ण आलस्य और दारिद्र्य के साथ, तारों की छाँव में सो रहे होते हैं। इक्का-दुक्का कुत्तों के भोंकने गधे के रेंकने या गाँव-सीवान पर किसी लिड़हिया-लोखरा के रोने के अलावा अक्सर मौन ही पसरा रहता है। ...लेकिन नुन्हाटा गाँव में उस रात न किसी की आँख में नींद थी, न ही कोई मौन...। गाँव के छोर पर 'चप्पे' मेहतर की मड़ैया जलकर राख हो चुकी थी। गाँव से कमल पार्टी के विधायक रहे सुरेंद्र सिंह कुशवाह के चाचा, सबलसिंह उर्फ सबले पंजा पार्टी के भक्त हरदेव पुरोहित के खिलाफ रिपोर्ट लिखाने रात ही रात 'चप्पे' को लेकर ऊमरी थाने निकल गए थे। नींद से जागे गाँव के सारे थोक-पड़ोसों में चर्चा का बजार गर्म था।

अथाई पर कुछ लोग राधे धानुक को घेर कर बैठ थे। राधे शहर में विधायक के सँझले चाचा श्यामौतार के ट्रक पर कई सालों से बतौर कंडक्टर, चप्पे के साथ बाहर रहा है। भीतर की जो बात राधे जानता है, वह शायद ही किसी और को पता हो। ...राधे गाँव बाहर रमतला के किनारे पीपल के नीचे अथाई पर गाँव वालों से घिरा कुछ इस तरह बैठा था - जैसे भोले बालकों के बीच किस्सागो बूढ़ी नानी-दादी। राधे ने जैसे ही सबके सामने यह राज उजागर किया कि - 'हरदेव पुरोहित की बहू और चप्पे मेहतर के घर से बहनें-बहनें हैं?' सुनकर सब सन्न रह गए थे। एक बार को तो ऐसा लगा जैसे राधे की बात सुनकर पास की झाड़ियों से आती झिंगुरियों की झंकार, पीपल की बयार, रमतला की हिलोरें और लोगों की उठती-गिरती साँसें, सब ठहरकर उस चर्चा में शामिल हो गईं हैं। अथाई पर सुई डाला मौन और सब के मुख पर एक ही प्रश्न - 'सो कैसे?'

राधे ने सड़सी की तरह दोनों हाथ की अँगुलियाँ गर्दन के पीछे ले जाकर शरीर को थोड़ा तनाव दे जम्हाई ली और फिर अपनी बात पर आ गया था - 'अब जेल करो चाहे फाँसी, मालिक बात कहेंगे साँची। ...चप्पे के घर से और हरदेव पुरोहित की बहू; दोऊ हैं तो बहनें ही बहनें... और वे हू कोल्हाटी?'

- 'यह कोलाटी को होत हैं?' रामंथे दाऊ ने रानों की दाद खुजाते हुए, धोती से हाथ निकालकर पूछ ही धरा।

- 'बेड़िनी... मारास्ट में नाचवे-गाइवे को पेशा करने वाली जनीं, कोल्हाटी कहीं जाती हैं...।'

भगत एक बार फिर खाँसकर आगे बढ़ा - 'इंदर महाराज की दो अप्छरा, मैनका और रेनुका। दोनों भैंने निरत्य में प्रवीन। ...एक दिन महाराज इंदर का दरबार लगा था। सुरगलोक में सारे रिषी-मुनी और देउता जुरे थे, सोमपान और अप्छराओं का निरत्य देखने..। पर उस दिन बुलवाने पर भी इंदर महाराज की दो अप्छराएँ, रेनुका और मैनका निरत्य करने नहीं पहुँचीं। घर पर उनके बूढ़े बीमार मइया-बाप को बछिया लग रही थीं। पर गरीब का दुख महल में बसने वाले राजा और वन-बेहड़ में रहने वाले रिषी-मुनी का जानें? बा दिन सरग के सिंघासन पर विराजमान लोमस रिसी ने, उन्हें तुरंत असराप दे दिया - 'आज से इनका स्वर्ग में कोई स्थान नहीं, इन्हें यह लोक छोड़ मिरत्तुलोक में जाना होगाऽ...।' सरग से निकासित वे दोनों अप्छराएँ, धत्ती पे एक ब्राह्मन के घर जनम लेती हैं; नाम होता है छगन-मगन...।

एक बार दोनों बहनों ने इकास्सी का उपास रखा और दोनों ही मिलकर बाग से पूजा के लिए फूल बीनने गईं। लौटते समय मारग में चांडालों के घर रँधते हिरन के मांस की बास पाकर, छोटी मगन का मन विचल जाता है। मगन चांडालिनी से माँगकर आप ही मांस नहीं चखती, अपितु बड़ी भैन छगन के लिए भी ले आती है। मांस देखकर छगन बाबरी हो गई और रिस में आकर मगन को सिराप दे डाला - 'जाऽ पापिष्टा... सूरज देउता का उपास खंडित करने के कारण, अगले जनम तूँ अंधकार में भ्रमण करने वाली -कीट-कृमि भच्छी छिपकुली बने... तुझे कभी उजियारा प्राप्त न हो...!'

नागी और शांता दोनों सगी बहनें। नागी बड़ी और शांता छोटी। दोनों ही जन्म से भली-मान्सिन... अपने पुरखनगत से चले आ रहे मेले-ठेलों में 'लावणी' नाच दिखाने और जमीनदारों और ताल्लुकेदारों से चीरा (नथ) उतरवाने के सख्त खिलाफ। ...लेकिन बहन-बेटियों की जन्म से कमाई खाकर आलसी और निकम्मे हुए भाई-बापों ने उन्हें जबरदस्ती, उसी पेशे में धकेल दिया था...।

एक बार सातारिख (सप्तऋषियों) ने मिलकर बहुत बड़ा जग्य किया। सारे देउता और रिषी-मुनि उसमें इकट्ठे हुए। जग्य-धूम और वेद मंत्रों के उच्चार से सारा आश्रम पवित्तर बना हुआ था। पूर्णाहुति के दिन सातारिख ने देवता और ब्राह्मनों के लिए पंगत की व्यवस्था की। ...नाना प्रकार के व्यंजन-भोग, मालपुआ और नुक्ती (बूँदी) के साथ-साथ, प्रसाद में खीर भी बन रही थी। दैवयोग से जिस ठौर पर खीर का कढ़ाह चढ़ा हुआ था, उसी ओर एक करिया भुजंग विषधर मिढ़किया (मादा मेढक) का पीछा करता, उसी ओर चला आ रहा था। संजोग देखिए कि उसी कड़ाह के ऊपर छत की धरनियों में छिपकुली बनी शापित 'मगन' चिपकी हुई थी! मगन ने देखा कि मेढ़की तो छलाँग लगाकर करहिया के उस पार हो गई है, किंतु धरनी पर रेंगकर चलने वाला करिया नाग, खीर भरे गर्म कढ़ाह में जा समाया है।

नागी और शांता देखने में बड़ी खपसूरत थीं। दुनिया में सुंदरता अमोल है, किंतु हर सुंदर मोड़ी को उसका मोल चुकाना पड़ता है। नागी और शांता के भैया-बाप ने पहले तो एक अमीर ताल्लुकेदार से उनका 'चीरा' उतरवाकर एक मुश्त और फिर मेला-माँदलों में 'लावणी' के द्वारा किश्त-दर-किश्त उनकी रकम वसूल उठे थे, किंतु सुभाय की हठीली नागी और शांता; न तो किसी के साथ कभी मन से सोईं... और ना ही नाची थीं।

खीर भरे कढ़ाह में किसी विषधर नाग के गिर जाने की घटना से अनजान सातारिख, देउता और रिसी-मुनियों को भोजन परसने में जुट गए थे। आश्रम के बाहर तने चँदोवाओं तले आसन मारकर बैठे रिषी-मुनियों के सामने पातरें गिरने लगी। भंडारे से नाना प्रकार के पूड़ी-पकवान निकलकर, पंगत की ओर जाने लगे। अंत में जब खीर परोसने की बारी आई और रिषी जैसे ही कढ़ाह से खीर निकालने चले, ठीक उसी बखत सबके देखते-देखते वह छिपकुली कड़ाह में गिरकर मर गई। सर्प के गिरने से विषाक्त हुई खीर को देखकर, मगन का करतब्बोध जाग उठा। उसे विषमय खीर खाकर रिषी-मुनियों के अकाल मिरत्तमुख में पहुँचने से अच्छा, अपना जीउ बारना लगा। ...और आश्चर्य उसने सबके देखते, उस खीर भरे कढ़ाह में गिरकर अपने प्रान होम दिए थे!!!

जब कभी भाड़ा नहीं मिलता या ट्रांसपोर्ट पर लंबी लाइन लगी होती, तो चप्पे राधे को ट्रक पर छोड़, पास के हाट-बाजार या मेले-ठेले में घूमने निकल जाता था। नागी से उसकी भेंट अंबाजोगाई के एक जलसे में, ऐसे ही एक बार लावनी (लावणी) देखते हुई थी। नागी और शांता उसे बड़ी भलीमान्सिन लगीं। साथ ही उसे उस समय यह भी लगा था कि मंच पर नाचती नागी और शांता, बाजारू नचनियों जैसी फूहर और कुभर बकने वाली नहीं हैं...। 'लावनी' करते वे दोउ बहनें उसे ऐसी लगतीं, जैसे वे नाच नहीं; नाचकर पिछले जनम का कोई कज्ज उतार रही हों...?

सत्यानाश!!! सातारिख के आश्रम में चारों ओर त्राहिमाम मच गई। साँची बात से अनजान उन रिषी और ब्राह्मनों ने मिलकर, उस छिपकुली रूपी मगन को फिर शाप दे डाला - 'हमारे पकवान को भृष्ट करने वाली ओ! अधम सरीसृप! अगले जन्म तुझे 'चांडाल' योनि प्राप्त हो? ...तुझसे सब घृणा करें!! तू सबकी असम्मानीय हो!!!'

आम कोल्हाटियों की भाँति नागी और शांता में दर्शकों को रिझाने वाले लटके-झटके न होने पर भी चप्पे को न जाने क्या हुआ कि वह जब भी ट्रक लेकर उधर से गुजरता तो उनका नाच देखने जरूर जाता, जबकि उनका कोई एक ठौर-ठिकाना नहीं था। ...जलसे में चप्पे सबसे अगरी कुर्सी पर बैठता और पैसे भी खूब देता था। लेकिन न कभी उसने किसी गाने की फरमाइश की और न ही औरों की तरह, नाचती रूपैया लेने आती 'नागी' के साथ कोई बेजा हरक्कत...।

आश्रम के चेला-चपाटे और जग्य के कार्यकर्ता रिसी-मुनी मन ही मन और खुलकर उस छिपकुली को गारीं देते खीर सहित कढ़ाह को जब घूरे पर ले जाकर उँधाते हैं, तो उनमें से एक चेला के मुख से चीख छूट पड़ती है - सर्प! सर्प!! सर्प!!! सब हक्के-बक्के रह जाते हैं। पवित्तर आत्मा छिपकली के कढ़ाह में गिरकर प्रान होम देने की साँची बात, अब सबकी समझ में आने लगती है। पश्चाताप। लेकिन कमान से छूटा तीर और रिखमुख से निकला असराप पुनः लौटाया नहीं जा सकता। ...रिषियों ने संसोधन किया -'हम ऋषियों और ब्राह्मणों के लिए अपने प्राणाहूत करने वाली हे पवित्रात्मा सरीसृप; श्रापवश तुझे चांडाल तो बनना ही पड़ेगा, लेकिन तेरा जन्म एक न्यायप्रिय राजा के घर होगा और 'देवी जागरण' करके तू इस श्राप और अपने पूर्व जन्म के पातकों से अवश्य मुक्त हो जाएगी...।'

उसके मन की यह लगी-बगी कोई दो साल तक चलती रही। लगातार जलसे और अपने डेरे पर आने वाले इस तरघुन्ना जीव को, अब नागी भी कुछ-कुछ पहचानने उठी थी। लेकिन चौबीसो घंटे पहरेदारी पर लगे बाप-भाइयों और डेरे के अन्य कोल्हाटियों की चौकसी के चलते, नागी से उसकी मुलाकात बहुत कम ही हो पाती थी। परंतु आँखों से बातों का व्यौपार कभी कम नहीं हुआ।

रिषियों के वरदान से अगले जन्म वह छिपकली मगन और उसके पूरब जनम की बड़ी बहन छगन एक बार फिर साथ-साथ एक धरमी राजा के घर जनम लेती हैं। राजमहल में कन्या जन्म से प्रसन्न राजा, अपने शगुनियाँ ब्राह्मनों को बुलाकर उनकी जनम कुंडली और भविष्य बूझता है। गुनी शगुनिया पत्रा फैलाकर उन कन्याओं का भविष्यफल जाँचते हैं। घड़ी-नक्षत्र और चौघड़ियों का मिलान करने के बाद प्रधान शगुनिया, कुछ देर के मौन उपरांत बोला-'महाराज! आपकी बड़ी कन्या श्रेष्ठ और शुभ महूरत में पैदा भई है। ...उसके जन्म के नक्षत्र कहते हैं कि वह किसी चक्रवर्ती राजा की राजपट्टभि बनेगी..., लेकिन...।'

- '...लेकिन क्या राज पुरोहित, हमारी छोटी कन्या का भविष्य कैसा है...। आप मौन क्यों साध गए महाराज!' एकाएक राजा को हजारों-हजार शंकाओं के सर्प ने घेर-घँघोटा लिया।

- '...महाराज! सत्य कहते हुए हमारी जिह्वा काँपती है... पर सत्य तो सत्य होता है न राजन...!' पुरोहित कुछ घिघियाते हुए बोला था।

- 'कैसा सत्य आचार्य...?'

- 'आपकी छोटी कन्या बड़े ही अशुभ नक्षत्र में पैदा हुई है... इसका पाणिग्रहण संस्कार एक चांडाल से होगा।'

- '! !! !!!' सारे दरबार से लेकर रनिवास में हाहाकार मच गया। एक राजकन्या के विवाह का योग नीच चांडाल से? असंभव। न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। राजा ने निर्णय लिया और तुरंत सद्दी-मुत्सद्दियों को बुलाकर अग्या दी कि कुघरी में पैदा हमारी

इस कन्या को सोने के कटहरे (कटघरे) में लिटाकर, नदी में जलप्रवाह कर आओ - न देखेंगे न भूँकेगें।

नागी से चप्पे की पहचान चौमासे में जमे रूख की छाँह सी दिन दूनी रात चौगुनी घनी होती गई। चप्पे नागी की खूबसूरती और उसकी बोलती आँखों पर मिटता, तो नागी उसकी सिधाई पर। अब वह उसके डेरे पर भी जाने लगा था। किंतु हर रोज सोने के अंडा देने वाली मुरगी नागी की रच्छा में मनिहारे नाग सा फन धरकर बैठे नागी के बाप-भाई, चप्पे को कम ही उसके पास फटकने देते थे। ...पर कहते हैं प्रीति पर कौन पहरे बिठा सका है, किसने सूरज मुठी में बाँधा है और किसने हवा गाँठ करी है। ...सो नागी और चप्पे को भी वे मिलने से रोक नहीं पाए।

राजा की अग्या पाकर उन सिपाही-सलारों ने उस अपशकुनी कन्या को एक सुंदर कटहरे में धरकर, महल के नीचे बहने वाली बेगवती नदी में प्रवाहित कर दिया। कटहरा नदी की तेज लहरों पर दचका खाता, आगे की यात्रा पूर्ण कर उठता है। कन्या की जीवन-जेवरिया कमजोर न थी। नदी की हिलोर और कच्छ-मच्छों की ठोकरों से भी वह कटहरा, डूबता नहीं बहता ही जाता है। ...कई दिनों बाद कटहरा, बहता हुआ अजुद्धया नगरी से होकर जा रहा था। भिंनसारे नदी के जल पर गिरती सूज्य नारायन की किरनों से ऐसा लग रहा था, मानों सुमेरु परवत ही पिघलकर सरजू में बहा जा रहा है।

तभी एक वृद्ध ब्राह्मन प्रातः अस्नान के लिए तट पर आता है और वस्त्र उतारकर जैसे ही नदी में धँसता है, वैसे ही उसकी दृष्टि सूरज की किरनों से होड़ करते बीच धार बहे जा रहे उस सुंदर कटहरे पर पड़ती है! वृद्ध वामन प्रयत्न करने पर भी पकड़ने में असफल रहता है। निराश मदद की आशा में आसपास देखा, तो दूर किनारे मसान की ओर एक हस्ट-पुष्ट चांडाल अपने शिकारी कुत्तों के साथ, मुर्दों का वस्त्र बीनने उधर ही चला आ रहा था। ब्राह्मन ने चांडाल को टेर लगाकर पास बुलाया और नदी में बहते जा रहे कटहरे को बाहर खींच लाने का आदेश यह कहकर दिया कि उसमें जो भी होगा वह तुम्हारा...।'

राधे थोड़ा साँस लेकर फिर आगे बढ़ा - जब दो मीत होते हैं, तो उनका एक दूत भी होता है। वह पहले उनके प्रेम में पुल बनता है, फिर गंगा जमुना के संगम पर सुरसुती की तरह अलोप हो जाता है। ...राधे और नागी का भी एक दूत था, होटल का चाय वाला लड़का - कोंडीबा। वह होटल पर आने वाले यात्रियों, ड्रायवरों, क्लींजरों और कोल्हाटियों के डेरे पर, समान रूप से चाय पहुँचाने का काम करता था। उस समय कोल्हाटियों का डेरा अंबाजोगाई के पास एक वार्षिक मेले में रुका हुआ था। कोंडीबा की युक्तियों के माध्यम से चप्पे और नागी की कई बार भेंट हो चुकी थी। अनपढ़ होने पर भी नागी को काम चलाऊ हिंदी आती थी और वर्षों से उस क्षेत्र की यात्राएँ और नागी के प्रति गहरे लगाव के चलते, चप्पे भी अब मराठी समझने लगा था।

ब्राह्मन की अग्या शीश धरकर वह चांडाल नदी में कूदकर तेज धार चीरता, उस कटहरे को पार पर ले आता है। नदी की रेत पर ब्राह्मन ने जब उस कटहरे को खोला, तो उसमें उसने सूरज की किरनों से होड़ करते एक कन्या शिशु का पाया। ब्राह्मन अधीरता समाप्त हुई और उसने वचनानुसार वह कन्या शिशु, चांडाल को सौंप दिया। संयोग से निःसंतान चांडाल का हेज उस कन्या पर उमग पड़ा और देवी मैया का वरदान मान, उसे छाती से चिपका घर ले आया। चांडाल दंपत्ति ने कन्या का नाम रुक्मिन रखा और सयानी होने पर उसका ब्याह अजुद्धया के एक चांडाल पुत्र से कर दिया।

एक रात जब कोल्हाटियों का सारा डेरा, नींद के आगोश में पड़ा सो रहा था। नागी लावनी में पहनी जाने वाली नौगजी कोल्हापुरी साड़ी-चप्पलें और वैसे ही साज-सिंगार में, टट्टी का लोटा ले अँधेरे-अँधेरे, कोंडीबा के इशारे ढाबे पर खड़े चप्पे के ट्रक में आकर चुपचाप बैठ गई थी। इस तरह कई दिनों की मंजिल तय करके चप्पे, नागी को गाँव ले आया था।

रात के कोई दस बजे थे। अँधरिया रात। चप्पे अपना ट्रक ट्रांसपोर्ट पर खड़ा न कर सीधा गाँव ले आया था। नागी को लेकर जब वह घर में घुसा तो खिलौना बुआ जग रही थीं। ट्रक की आवाज और उससे छिचौक हो लगातार भूँकते कुत्तों के कारण, अचानक उनकी आँख खुल गई थी। ढिबरी के मंद उजीते में मड़ैया के भीतर उन्होंने जब किसी को आता देखा, तो वह भड़भड़ाकर खाट से उठ बैठी थीं - 'को है?'

- 'हम हैं बुआ - चप्पे।' चप्पे ने आगे बढ़कर बुआ के पैर छुए, तो बुआ गद्‌गद्‌ हो अशीष दे उठीं, किंतु उसके बाद किसी और के पाँव पड़ते ही वह सतर्क भी हो गई थीं। आर्शीवाद में जैसे ही सिर पर हाथ रखा, तो वह नंगा नहीं साड़ी के पल्लू से ढँका हुआ था। उसने खाट पर लटके पैर तुरंत पीछे खींच लिए - 'चप्पा, तेरे संग जे जनानी कौ है...?'

- 'तिहारी बहू...!'

- 'नासमिटे मो बूढ़ी से चुहल कत्तु है, बिना ब्याह-गौने के बहू काँ से ले आयो...?'

- 'माराष्ट सें...।' चप्पे ने बुआ की अकुलाहट शांत कर दी थी। अपने भैया-भौजाई की आखरी निशानी - चप्पे के विवाह के लिए वह बिरादरी वालों से मिन्नते कर-करके थक गई थी, पर गरीब और अनाथ चप्पा के लिए कोई भला भंगी राजी नहीं हुआ था। ...बुआ की बूढ़ी बुद्‌धि फिर सब कुछ मान गई थी। उसने कमर पर हाथ रख आले से ढिबरी उठाई और डेरे हाथ की अँगुलियों का छप्पर आँखों के ऊपर लगा, खाट पर सामने बैठी नागी को गौर से निहार उठी थी। गोरी छरहरी नागी का गोल चेहरा, सुँतवा नाक, कारी-कजरारी आँखें, माथे पर लाल बिंदी, नाक में गूँजदार नथुनी और ठोड़ी पर गोदना गुदे इकठ्‌ठे तीन तिल देखकर तो वह है-हा गई थी - 'हाय बेटा! ठाकुर ब्राह्ममननि के गाँव में जा चंदा की पुतरिया कौं कहाँ मूँद कैं धरेंगे...?'

- 'बुआ तेनें आवत ही आल्हा ढील दई... रोटी-पानी की तो कछू न पूछी।'

- 'अरे! हाँऽ...।' भोली बुआ को जैसे अपनी गलती का अहसास हुआ...। उन्होंने तुरंत ढिबरी ताखे में रखी और खाट के नीचे से लोटा उठाकर जैसे पानी के लिए उठीं, तो नागी ने हाथ पकड़ उन्हें वहीं बैठा दिया और स्वयं लोटा लेकर मड़ैया में पानी कहाँ रखा है; यह देखने लगी थी।

यद्‌यपि पुजारी को कथा सुनाते-सुनाते ऊँघ आने लगी थी, लेकिन श्रद्‌धालु श्रोताओं की कथा में जिज्ञासा बढ़ती ही जा रही थी। पुरोहित ने चौकी के पास रखे कलश से दो घूँट पानी पिया और फिर आगे बढ़ा - अजुद्‌धया में रुक्मिन का पति शिकार के द्‌वारा इकठौरी की गई माँस-मछलियों का व्यौपार करता और रुक्मिन राजमहल में

टहल-बेगार। एक दिन झरोखे से सतवादी राजा हरीचंद की महारानी तारामती ने महल के नीचे रुक्मिन को टहल करते देखा, तो एकटक उसे निहारती ही रह गईं। ऐड़ी से चोटी तक उन्हीं के अनुहार। बालपना की सुधियों ने सुरति सम्हाली, तो झरोखे से उतरकर रुक्मिन के पास चली आई थीं। रानी के पास आते ही हीनता और संकोच के चलते पीछे हटती रुक्मिन के और समीप जाकर, रानी ने उसकी फरिया उघाड़ दी थी! कहते हैं खता (घाव) भर जाता है, पर गूँथ (निशान) नहीं मिटती!! रुक्मिन के करिहा पर भी बचपन की एक पुरानी गूँथ थीं, जो उसके दाई द्वारा हँसिया से नारा काटते धोखे से लगी चोट पर बनी थी!!!

- '...जे का कर रहीं महारानी जूऽ...।' रुक्मिन सकपका गई थी। रानी तारामती ने उसका खरारा (झाड़ू) अलग फेंककर गले से लगा लिया - 'बाबरी तूँ नहीं जानती, तेंऽ मेरी छोटी बहन है...!' परंतु अपनी औकात में रहने वाली रुक्मिन, उससे छिटक कर अलग हो गई थी - 'हम गरीबिनी से ऐसी चुहल मत करो महारानी, तुम छत्तरी हम चंडाल...?' उसे रानी की बात का भरोसा नहीं बैठा।

- 'नहीं रुक्मा! तूँ मेरी बालापन में ब्राह्मणों कहने पर, पिता द्वारा अपशकुनी मानकर नदी में पुहा दी गई - मेरी छोटी बहन है?' रानी भावविभोर, किंतु अविश्वास से भरी रुक्मिन एकदम सन्न रह गई। ...उसे एकाएक बालपन में पक्कड़ की अन्य लड़कियों के साथ खेलता देख, अपने चांडाल बाबा द्वारा कहा यह बक्कुर सुधि आ गाया था -'कौनहू छत्तरी-वामन की बिटिया होयगी, कौवन के झुंड में कहूँ हंस के चेंटुआ नहीं दुरत?' रुक्मिन का सारा बजूद हिल गया। मन में भावनाओं ने हिलोर ली, तो आँखों से मोरिया जैसे बड़े-बड़े आँसू चू पड़े। हाथ का झाड़ू काँख में दबाकर दोनों कर जोड़, घुटनों के बल रानी तारामती के सामने बैठ गई - 'अब इन बातिन में कोहू सार नाहीं जिज्जी! मेरा भरतार चांडाल और तुम्हार छत्तरी... तुम्हार धरम हमार छाँव छुवन से ही भिरष्ट हो जात है, हमें भूल जाओ जिज्जीऽऽऽ!' रोती रुक्मिन तेज गति से महल के बाहर चली गई थी।

चप्पे जिस दिन से नागी को घर लाया था, सारे गाँव में उसी दिन से उसकी सुंदरता के चर्चे फैल गए थे। हार-खेत, घर-बाहर, कुआँ-घाट सब जगह। ...गाँव की ठाकुर-ब्राह्मनी संझा-सबेरे जब गुट्ठ के गुट्ठ टट्टी के लिए नरिया आतीं, तब भी

उनकी चर्चा का विषय नागी ही होती थी। कई बार नागी अपनी खिलौना बुआ के साथ उनके गुट में शामिल हो जाती, तो गाँव की वे ठाकुर-ब्राह्मनी और अन्य जाति की औरतें उसके मुँह पर ही यह कहे बगैर न मानती थीं - 'जे तो भंगिन जैसी नाईं लगत, चप्पा कहूँ से ठाकुर-ब्राह्मनी पकर लाओ है?' उनकी इस बात को तब और हवा लगी जब चप्पे ने अपनी बुआ के आगे ऐलान कर दिया - 'उसकी बहू गाँव में किसी की टहल-बेगार करन नहीं जाएगी?' सारा गाँव सन्न - चप्पा, जनम-जिंदगी से चली आई रीति मेट रहा है -सारे भंगिया की हिम्मत तो देखो?' पर म्याऊँ के मुँह में हाथ कौन डाले? चप्पा गाँव से भिंड जा बसे विधायक के कका का, ट्रक ड्रायवर जो ठहरा...।

'इंदा' गाँव के एक मँझोले जमीदार शोभा पुरोहित का भतीजा। अम्मा-दद्दा बचपन में ही गाँव में पड़ी डकैती में डाकुअन के हाथों मारे गए थे। बाप-महतारी द्वारा हिस्से में छोड़ी पच्चीस बीघा खेती, उसके दौआ हरदेव पुरोहित ही अब तक लुनत-बोअत आए थे। पर अचंभा यह कि इतनी खेती-बाड़ी और अट्ठाइस साल ज्वानी पाकर भी इंदा का अभी कहीं से मौर नहीं धरा गया था! खुद हरदेव पुरोहित के तीन मोड़न में से मात्र बड़े लड़के का ही विवाह हुआ था, बाकी सब कुँवारे और हल-जोता किसान!! घर में पुरोहित का कड़ा आदेश था कि घर में बँधी बढ़नी रहेगी तो कभी दुखी नहीं रहोगे? इसलिए सब भाई एक ही थाली में खाते और... किसी को किसी से कोई शिकायत न थी।

पर पिछले साल की बात है। बरसात में गाँव के आदमियों और ढोर-बछेरुओं में हारी-बीमारी न फैले, इसके लिए सब जातियों की जनी-मानुसें मिलकर गाती-बजाती मैड़े की पूजा करने गाँव के सीवान पर आई हुईं थीं। इस निमित्त परंपरा है कि उस दिन गाँव की औरतों को बुलावा 'नाइन' नहीं गाँव की मेहतरानी घर-घर जाकर देती है और उसका नेगचार भी उसे ही मिलता है। उस दिन नागी के लाख मना करने पर भी खिलौना बुआ चरी लेने उसे भी गाँव के सीवान पर ले जाकर ही मानी थीं। गाँव की सारी बैयरों ने मिलकर जब जगराम बाबा के थान पर मैंड़े की पूजा की और 'होका' गातीं फिरक लेकर बारी-बारी से नाचीं, तो उन्होंने नई आई उस भंगिन बहू को भी नाचने के लिए विवश कर दिया था। नागी लावणी की नचनियाँ है यह कोई नहीं जानता था, लेकिन उस दिन वह जो नाची तो सब दाँतन तले अँगुरिया दबाकर रह गईं...।

इंदा उस दिन गाय-भैंसों के लिए करब काटने उधर ही आया हुआ था। करब का गट्ठा सिर पर धरकर जब वह नदी से करार चढ़ा, तो थान पर चरिहारियों के बीच फिरक लेकर नाचती नागी की रूप-लुनाई देख दंग रह गया। वह उसके रूप पर रीझा तो नहीं बल्कि नागी को देखकर उसे चप्पे की याद आ गई, जो कुछ दिन पहले उसी की तरह गाँव के रड़ुँओं में शामिल था और आज इस नोनी दुलैया को घर में डालकर उसकी बिरादरी से बाहर हो गया है। ...नागी के रूप को देखकर उसके मन में भी हिस्स जागी। दिन के उजाले में वह भी सपना देख उठा था कि उसके आँगन में भी अब पायल और बिछुओं की झनकार हो उठी है। गुलाबी घूँघट में कोई कजरारी आँखों वाली उसके घर पर भी बाट जोहती है। ...उसका आँगन भी अब नन्हें-नन्हें छोहरों की किलकारियों से गूँज उठा है। उसके दिन भी अब उजाड़ और रातें सूनी अंधियारी नहीं रहीं हैं...। पर इंदा के यथार्थ की भुम्मि इतनी ठाँगर या कहें कि ऊसर थी कि उस पर पत्नी नाम का हरियल विरछा रोपना आसान न था। कका हरदेव पुरोहित संस्कृत के साथ-साथ गणित के भी अच्छे गुनी थे। उन्होंने पहले से ही गुन-मंत्र लगा लिया था कि पच्चीस बीघा खेती उसकी और पच्चीस बीघा इंदा की उसके अपने बड़े लड़के नारायन के लिए ही रहेगी! क्योंकि न होने देंगे इंदा ब्याह!! न होंगे उसके बाल-बच्चे और न बँटेगी धरती!!!

इस बात से अनभिज्ञ इंदा अपने अम्मा-दद्दा के गुजर जाने के बाद से अब तक हरदेव पुरोहित को ही अपना तात-मात, गुरु-सखा सब मानता चला आया था। लेकिन जब से उसने नागी को देखा, तब से वह अपने बारे में कई तरह से सोचने को विवश हो गया था - 'मो में कौन सी कमी है, जो मेरो ब्याह अबै तक नईं भओ...?' यद्यपि औरों से कहने-सुनने के लिए 'इंदा' घर का मालिक था, पर आज न जाने उसे क्यों लगा कि घर में उसकी बखत एक लद्दू घोड़ा से ज्यादा नहीं, जिसकी कभी प्रशंशा हुई है तो अत्याधिक बोझ ढोने के कारण...। कभी किसी ने उसके मन में झाँककर नहीं देखा कि वह क्या चाहता है? और यही कारण रहा कि उसे किसी के सामने अपने मन की बात कहने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

जब दो-चार दिन हो गए और इंदा को अपनी बात किसी से कहे बिना नहीं रहा गया तो जी कड़ा करके अपने मन की बात, पुरोहित की बड़ी बहू और अपनी ककायंती भौजी

नारंगी के सामने कह सुनाई थी। सुआ की तरह पहले से रटाई-पढ़ाई नारंगी, मार गुस्से के उस पर उफन पड़ी थी - 'तो लला अब जा घर में एक पद्दिया (दीवाल) और उठाय के मानोगे...?' इंदा उस दिन बगैर कोई जबाव दिए, भरा-भरा सा गाँव की अथाई पर चला आया था। वहाँ उसे गाँव की नैहनियाँ जाति की लुगाइयों द्वारा उस पर ढारकर कहे वे बोल, रह-रहकर याद आ रहे थे - 'ब्राह्मननि में तो एक ब्याहता और चार रड़ुँआ रहत हैं...!' पर क्यों रहते हैं, यह उसे आज समझ में आ रहा था। उससे वहाँ बैठा नहीं गया और फिर जाने क्या मन में आया कि उसके बढ़ते डग, गाँव के छोर पर बनी चप्पे की मड़ैया की ओर उठ गए थे। संयोग से उस दिन चप्पे घर पर ही था। ...जब से वह नागी को गाँव लाया है, तब से वह हर फेरी चार-छह दिन में घर का चक्कर लगा ही जाता है। उस दिन वह मड़ैया के द्वार से कुछ दूर सैर में खड़ें ट्रक के चारों ओर घूमता, सब्बल से टायर ठोंकता हवा देख रहा था।

इंदा को देखकर भी चप्पे ने अनदेखा करना चाहा, उसे इस जाति के लोगों को देखते चिढ़ छूटती है - 'इनके नेकसे छोहरों को भी 'पाँय लागो पंडिज्जी' कहो और ये हमारे अस्सी साल के पुरखा को भी नाम लेकर ही टेरत हैं?' उसने कन्नी काटनी चाही, पर इंदा तो आज सिर्फ उसी से ही मिलने आया था। उसने दूर से ही मीठा उलाहना देते हुए पुकारा - 'काये चप्पे! घर में नई महरिया के आवत ई हमें भूल गए? जे मत भूलो कि कल तक तुम हमारी ई बिरादरी में शामिल हते...।' इंदा की मिसरी से भी मीठी बात सुन चप्पे मन की ईर्ष्या भूल शर्म से एकाएक लाल हो गया था। उसने फिर भी अपनी हेंकड़ी बरकरार रखते इंदा पर रौब गाँठा - 'हते तब हते, अब नइंया; अब तो हम ब्याहता हैं ...कहो तो तिहारो हू करवाय दें (ब्याह)...?'

- '...।'

इंदा तो लगभग यही मंशा लेकर घर से आया था, पर व्यक्त रूप से कुछ कह नहीं सका किंतु मन ही मन प्रसन्न हुआ। चप्पे के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर सिद्ध हुआ, उसने हाथ आया मौका न गँवाते इंदा पर अपनी एक और हेंकड़ी कसी - 'चलो हटोऽ तिहारे बस की बात नांय? तुम तो दुबका-चोरी वाले हो - अपनो जनेऊ बचाओ...!'

यद्यपि यह बात इंदा को अंदर तक बेध गई थी और यदि कोई और अवसर होता तो वह चप्पे पर टूट ही पड़ता, लेकिन उस समय उसने अपनी हेंकड़ी बरकरार रखते हुए गर्वोन्नत होकर चप्पे को अपने पक्ष में किया - 'कराय के बताओ, तब हम जाने तुम्हें-मद्द की पूँछ?'

- '...पीछे मत हट जइयो? देखें कोऽ अपने बाप कौ नईं...?' चप्पे ने सब्बल एक ओर पटकते हुए साफी से माथे का पसीना पौंछा और इंदा के पास आ खड़ा हुआ था। इंदा अब तक ट्रक के बैक साइड तख्ती पर लिखा स्लोगन पढ़ रहा था - 'सीख ले बेटा ड्रायवरी भौंड़ा तेरा कर्म, रोटी मिलेगी कभी-कभी सोना अगले जनम।' उसे स्लोगन का पहला हिस्सा तो कुछ जँचा नहीं, पर दूसरा उसे ऐसा लगा जैसे यह उसके लिए ही लिखा गया है - ...रोटी मिलेगी कभी-कभी सोना अगले जनम?' उसका चेहरा एकदम फक्क पड़ गया था। वह चप्पे के सामने हेंकड़ी बरकारार न रख सका और दीनता से भर उठा था। उसने चप्पे का कंधा पकड़कर उसकी आँखों में बड़ी आशा के साथ झाँका था - 'तुम हमारो ब्याह कराय सकत हो?'

- '...!'

- '...रूपियन की चिंता मत करियो, भले ईं हमें अपनो बीघा-दो बीघा खेत काये नईं बेचने परै; बस्स! तुम हमारौ घर मढ़वाय दे...?'

- 'हुँ...!'

- 'तो कबै?'

- 'बताएँगे...।'

- 'पीछे मत हट जइयो...।

- 'नऽनहीं...।'

- 'तो पक्की रही...?'

- 'हुँ...।' चप्पा ने अंदर की असमंजसता छुपाते हुए 'हाँ' तो कर दी थी, लेकिन इंदा के जाते ही वह एक बड़े धर्मसंकट में फँस गया था। वह कोई पेशेवर दलाल थोड़े ही था, जैसेकि कन्यावध और भ्रूणहत्या के मामले में अग्रणी इस अंचल में बड़े पैमाने पर सक्रिय हैं और जो लड़के के बाप से एक मोटी रकम लेकर - बिहार, बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र और आंधप्रदेश से गरीब और भुखमरी की शिकार लड़कियों की खरीद-फरोख्त करते रहते हैं।

इंदा के जाने के बाद चप्पा ने अपनी सारी व्यथा नागी को बतायी और साथ ही उसे यह भी बताया कि इंदा निहायत ही सीधा और भलमुँसई वाला अनाथ लड़का है। उस समय चप्पे की निगाह में नागी की छोटी बहन 'शांता' का चेहरा घूम रहा था, जो नागी की ही तरह कभी मन से लावणी करने की इच्छुक नहीं हुई। नागी उसका आशय समझ गई और उसने इंदा के लिए शांता के ब्याह की 'हाँ' कर थी किंतु चप्पे ने उसे बताया कि इंदा इसी गाँव का ब्राह्मन लड़का है और वह अपनी बहन से कभी खुलकर नहीं मिल पाएगी!!!

परदेश में अपनी सहोदर बहन के आसपास ब्याह जाने के अनुभव मात्र से ही नागी प्रसन्नता से भर गई थी। उसने एक चिट्ठी अपनी मुँहबोली मौसी कुंदा के मार्फत, शांता के लिए भिजवा दी थी। चिट्ठी पाकर शांता भी अपने भाउ, बाबा, मौसियों और चचेरी बहनों के बीच से 'तमाशा' और 'लावणी' के पीछे चलते देह-व्यापार के दलदल से निकलकर, एक दिन चप्पे के साथ चुपके से भिंड चली आई थी।

इंदा के साथ मिलकर बनाई गुप्त योजना के तहत चप्पा ने शांता को अपने घर न ले जाकर, गाँव से दस कोस दूर लालौरी गाँव के हमपेशा युवक पंडित रतिराम उर्फ मुफ्तलाल के घर ठहराया था। पंडित रतिभान उर्फ मुफ्तलाल का इतिहास यह है कि वह बहुत पहले अपनी अहीर माँ के साथ पूरब से लालौरी गाँव आए थे; चूँकि पंडित रतिभान उर्फ मुफ्तलाल अपनी माँ के साथ लालौरी के सौतेले ब्राह्मण पिता पंडित हरिपस्साद को मुफ्त में मिले थे, इसलिए गाँव वालों ने उनका नाम 'मुफ्तलाल' रख दिया था!!!

यद्यपि पंडित रतिभान का पालन-पोषण उनके सौतेले पिता ने अपने जियांदा बेटों से कुछ ज्यादा ही किया था, किंतु उनकी जाति-बिरादरी और घर-परिवार ने मुफ्तलाल को कभी अपना नहीं माना। उसका शादी-ब्याह तो दूर, हर कारज-पवनी उसे भी माँ के साथ सदैव छेककर रखा गया। ...गाँव-घर से छिके-न्यारे रहते जब सयाना-समाना हुआ, तो उसने भी सौतेले पिता की राह पकड़ी थी। आज उसके घर भी ट्रक ड्रायवरी की राह से आई एक मराठी मानुष पत्नी और चार बाल-बच्चे हैं। ...सच पूछा जाए तो चप्पे रतिभान की पत्नी के आश्वासन पर ही 'शांता' को अंबाजोगाई से लाने के लिए राजी हुआ था; क्योंकि एक गाँव में होने की बात पता लगते नागी शांता से अवश्य मिलती और इससे इंदा की कम, उसकी थुक्का-फजीहत ज्यादा होती?

लालौरी में शांता को 'मुफ्तलाल' की अनाथ साली कहकर प्रचारित किया गया, और उसी के माध्यम से चप्पे ने पुरोहित से इंदा के ब्याह की बात चलवाई। पुरोहित पहले तो राजी नहीं हुआ, किंतु बात जब नहीं बनी तो लड़की के कुल-गोत्र पर उतर आया था - 'बाप सनाढ्य है कि कनौजिया? हम भरद्वाज गोत के हैंऽ... काहू गँड़ बदलाऽ की मोड़ी सै अपने इंदा कौ ब्याह नईं करेंगेऽ...।' पर इंदा अब इस भरमाए-भरम में न था। वह उसी बखत तचकर बोला - 'डोऽकर... हमने भौऽत देख लई तिहारीऽ कि तुम हमारे कितने हिमरायती हो...? नीऽके ब्याह की हामी भर देउ? नहीं तो तुम्हारे और तिहारे मौड़न के हाथ-गोड़ काट के बेसुली में बहाय देंगे...।' इंदा के इस रौद्र रूप को देखकर, पुरोहित ने अंततः रिश्ते की हामी भर ली थी और इस तरह इंदा का 'शांता' से नाता पक्का हो गया था...।

रतिभान के दोनों चूल्हे बारकर (वह शादी जिसमें दोनों ओर का खर्चा लड़के का बाप ही उठाता है) ब्याह करने की शर्त पर, इंदा की बारात लालौरी गई और धूमधाम से शांता को ब्याहकर नुन्हाटा ले आए थे। बरात में पूर्व योजना के तहत विधायक के चाचा सबले की मार्शल और डी.सी.एम. बाँधा गया, जिसमें बतौर ड्रायवर चप्पे भी शामिल हुआ था! किंतु चाहकर भी करम अभागी 'नागी', अपनी सगी बहन के ब्याह में शामिल नहीं हो पायी!! उसे जान-बूझकर उस छाया से दूर रखा गया था!!!

रुक्मिन उस दिन रानी तारामती के पास से रोती हुई चली तो आई, लेकिन हुकुम की बंदी रुकमा को महल में टलह के लिए एक न एक दिन तो जाना ही जाना था। वह गई

लेकिन रानी उसे अब वह काम नहीं करने देतीं। वे उसे भाँति-भाँति समझातीं। सिच्छा देतीं। मदद करतीं। किंतु लोक-लाजवश और अपने चक्रवर्ती पति महाराज हरीचंद के भय से रुक्मिन को महल में भीं नहीं घुसा पातीं थीं। ...बखत सतजुग का था। सातों जात अपने वरन-धरम पे थिर...। अपने छत्तरी पति के धरम में रत रानी तारामती जब अपनी सगी-सहोदर बहन को कान बराबर लंबा खरारा लेकर गली बुहारते और सारे नगर का मल-मूत्तर ढोते देखतीं, तो उनका हिया फटता। महल के सातों-सुख और अपना पटरानी होना उन्हें काट खाने को दौड़ता, जिसकी मरजाद में बँधकर वे किसी के सामने अपनी सहोदर बहन का परचै नहीं दे पाती? ...पूरी तरह ब्राह्मनों के परभाव में उस जुग का राजा भी जब अपने वरन-धरम से मुख नहीं मोड़ सकता था, ऐसे में भला राजा की अनुचरी रानी तारामती की भला क्या बिसात? अंततः रानी सतजुगी सत्ता की बलिहारी मान शांत हो गई थीं।

शांता जिस दिन से गाँव में ब्याहकर आई, उसी दिन से उसकी सुंदरता के चर्चे भी पूरे गाँव में फैल गए थे। सातो जात की लोग-लुगाइयों में शोर था - 'भई; वाह! बहू तो पुरोहित के आई है - जैसे परी-अप्छरा होय...?' और यह सत्य भी था 'तमाशा' में जब गोरी-चिट्टी शांता मंच पर उतरती और गायक साजिंदों के स्वर में सुर मिलाकर - 'अप्सरा आली रे' लावणी गाते, तब नाचते हुए वह सचमुच की ही अप्सरा लगती, जैसे सज-सँवर कर अभी-अभी इंद्रलोक से उतरकर आई हो...। उसे गाँव-भर की जनीमाँसों ने कहीं मौंचाने के तौर पर तो कहीं किसी और बहाने से जी भर कर देख लिया था। यदि नहीं देखा तो उसकी अपनी सगी बहन नागी ने, जो इसी गाँव में छोर पर रहती है!

कहते हैं वस्त्रों से नगीच मानुष की त्वचा होती है और पानी से गाढ़ा रकत, सो रानी तारामती को सोते-जागते, उठते-बैठते बस एक ही दुख सालता कि वह तो महलों में पटरानी बनी धत्ती के सारे सुख भोग रही है और उसकी सगी बहन गू-मूत ढोती विकट गरीबी में...! रानी गुप्त रूप से रुक्मिन की पइसा-टका से मदद भी करती पर यह उसकी बिटम्मना देखो कि अपनी बहन को बहन नहीं कह पाती! तीज-तुहार को बुला-चला नहीं पातीं!! यहाँ तक वह उससे खुले में बात भी नहीं कर सकती थीं!!! रानी के दुख का पारावार नहीं। उसका चंपा-चमेली सा हँसता-विहँसता गोरा मुख, हरद की गाँठ सा पीला पड़ गया। राजा उसके मुरझाए मुख का कारण पूछता, तो वह भेद छुपा

जाती। मारे चिंता के रानी के दिन का चैन और रात की ओंघ हराम हो गई, पर कोई उपाय न सूझता...। रुक्मनि पर विचार करते-करते रानी, अब जाति और वरन धरम पर भी विचार करने लगी थी। किंतु सूदर पिता और ब्राह्मन माता की कोख से पैदा हुए वरनसंकर 'चांडाल' के संबंध में उसे, किसी भी धरम-गिरंथ में आदर-सत्कार के दो आखर नहीं मिले!!! रानी फिर निराश। फिर अगले ही छिन ही उसे भान हुआ कि रुक्मनि तो जन्मजात चांडाल नहीं है? वह तो धर्म के मारग पर चलकर इसी जन्म में अपने नीचपने से उद्धार पा सकती है।

इस बीच पुरोहित के घर एक अनहोनी घट जाती है। उनके बड़े बेटे नारायन की बहू और शांता की जिठानी - नारंगी। पहलौठी में ही पेट में बच्चा उल्टा होने और गाँव की अनाड़िन दाई के अजानपने के चलते, औलाद के साथ खुद भी कच्ची उमर में परलोक सिधार गई थी। परदेशिन शांता के लिए घर की उतनी बड़ी बखरी वीरान हो गई। ...घर-आँगन में काम करते -'काजर की डिबिया लियाओ बिसातीं, लगो महीना फागुन कौ' गीत गाती रहने वाली अपनी हँसमुख और मिलनियाँ जिठानी के न रहते, नागी को अब घर काटने दौड़ता। दोपहर को हार-खेत निकल गए पति और देवर-जेठों के बिना जब सूना घर भाँय-भाँय करता, तो उसका मन किसी काम में नहीं लगता। कभी-कभी तो सोच में डूबी, एक ही काम करते बैठी रह जाती। होश सा आता तो दूसरा काम कर उठती...। आँगन में कोई आम-निवरिया का पेड़ भी नहीं था, कि जिस पर बैठे सुआ-चिरैयाओं से झूठे-साँचे ही बतिया लेती। दूसरे ब्याह की जगह एक तरह से 'चाला' चलाकर लाई गई शांता पर, अभी भी किसी को पूरा भरोसा नहीं बैठा था! उन्हें लगता पता नहीं कब अँधेरे-उजेरे यह कुदेशन घर की सारी लिइय्या-चिइय्या समेट, भाग ठाड़ी होय? इसलिए पुरोहित अब हार-खेत न जाकर द्वारे नीम के नीचे चौंतरा पर खाट डाले, सफेद पिछौरा ओढ़े मुसट्ट मारे पड़ा रहता। कान देहरी के भीतर आँगन से आती चुरी-बिछुओं की रुन-झुन पर रहते, जो उसे इस बात का भरोसा दिलाए रहते कि उन्हें पहने वाला अभी घर में ही है। बिसासी छत कूदकर रात-बिरात पिछवाड़े से भाग न जाए, इसलिए जेठ ने जान-बूझकर नसैनी पहले ही तोड़कर एक ओर रख दी थी...।

रानी ने अपने कुछ गाढ़े जोयशियों से सलाह लेकर अगले दिन बाँदी को आदेश देकर रुक्मिन को भवन में बुलवाया। एकांत में रानी ने रुक्मिन को उसके पूरब जनम के पापों की सुधि दिलाते हुए कहा - 'यदि हमारा सत्यानाश धरम के मारग पर भटकने से हुआ है, तब हमारा उद्धार पुनः उसी मारग पर लौटने में है। ...क्यों न तू आज से अपने घर आदिशक्ति भगवती दुरगा मैया का जागरन करे? वे जगत की जननी हम अधम नारियन कौ उद्धार जरूर करेंगीं...?'

- 'जागन्न... और मैं, रानी तुम बौरा तो नहीं गई हो? नग्गर का कोई बामन मेरे घर जागरन तो का, उतै सें कढ़ने में भी अपनी हेटी समझेगा...!' रुक्मिन की बातों में क्रोध और तल्खी दूध में दधि के समान मन फाड़ने वाली नौबत तक उभर आई थी। पर रानी ने संयम रखा और उसकी पोंहची पकड़ मंद-मंद मुसक्याते हुए कहा था - 'क्यों नहीं आएँगे? साकेत की जा पट्ट महादेई रानी तारा का नाम ले देना, वे चुकटिया वामन जरूर तिहारे घर जागरन करने पहुँच जाएँगे...।' एकाएक रानी की बातों में आत्मअभिमान और राजमद एक साथ आ जुड़ा था।

जब तक घर में सूतक रहा तब तक रिस्तेदार और गाँव-टोला की जनीमाँसों का आना जाना लगा रहा, वे शांता को भाँति-भाँति समझाती-बुझाती रही थीं - 'बेटा! अब तुम्हीं जा घर की सासु-जिठानी हो, तुमेईं अब ये सब रग-जग सम्हारने है...?' पर वह गैर जिम्मेदार थी कब। उम्र में छोटी होने पर भी घर से लेकर जलसों तक में नागी के बराबर ही उसने काम करने और नाचने की भूमिका निभाई थी। उसने तो लड़कों से ज्यादा अपने आई-बाबा की देखभाल करने और और सारी जिम्मेवारी उठाने की भी कमर कस ली थी, किंतु जब उसे अपने पियक्कड़ बाबा और नसेड़ी मोटा भाऊ के लालचों का पारावार न मिला तब ही हठियाकर बड़ी बहन नागी के समान इस अनजानी डगर का मारग चुना था। दुरभाग! उसमें भी काँटे-ही-काँटे...।

रानी तारा का आदेश मानकर रुक्मिन सारी अयोध्या नगरी के ब्राह्मनों के पास घर-घर घूमी। जहाँ गई वहाँ उसकी खूब खिल्ली उड़ी। कूकरों की भाँति कई जगह से दुरदुराया भी गया - 'एक चांडाल के घर सतजुगी ब्राह्मन का होम-जग्य...? असंभव। ससुरी बौरा गई है...।' कुछ ने तो उसके इस जतन पर राजा के दरबार में पकड़कर दंड दिलवाने की भी धमकी दी; पर कहते हैं कि जैसे गेहुँओं में कुंडवा उपज जाता है, ठीक

वैसे ही उन सतजुगी ब्राह्मनों में से एक मुद्रालोभी वामन ने मोटी दक्षिणा और तारामती के 'जागरण' में सम्मलित होने की शर्त पर, रुक्मिन के घर जागन्न करने की हामी भर दी थी...।

विदर्भ के अकाल और सूखाग्रस्त इलाके से चलकर चंबल के इस बीहड़ में आई शांता को, कुछ ज्यादा अंतर नहीं लगा। दूसरे औरत का अपना कोई देश और वतन होता ही कब है? जिस जगह वह जन्म लेती है और जिनके लिए जीवन भर हींड़ती रहती है, वह देश और उसके स्वजन ही उसे परदेशी और पराया धन मानते हैं, फिर जिस अनजान के साथ वह जाती है वह और उसका देश उसके लिए कितने अपने होंगे, इसकी कल्पना ही की जा सकती है...।

लेकिन एक स्थान से लाकर दूसरे स्थान पर रोपी गई धान की पौध की भाँति शांता ने भी वहाँ, अपनी जड़ें जमाना शुरू कर दिया था। बचपन में अपनी 'आई' से सीखी ज्वार की रोटी बनाने के आधार पर वह, यहाँ बाजरे की रोटियाँ बनाना सीख गई थी। बाकी सब एक सा था। दुनिया के सारे मर्द एक से होते हैं इस बात के शांता लिए कुछ मायने रहे होंगे, लेकिन प्रेम और भलमनसाहत पर उसे भरोसा था। जिस पर इंदा खरा उतरा, लेकिन पुरोहित और बाकी परिवार की दृष्टि में वह बहुत कुछ कुजात और कुदेशन ही रही।

यद्यपि बूढ़े हुए पुरोहित ने बेवशी में सारा घर अब उसे ही सौंप रखा था, लेकिन घर के बक्सा और भंडरिया की चाभी अब भी उसके जनेऊ में ही बँधी थी। लोभपना के लिए पूरे गाँव में सरनाम पुरोहित, तीज-त्यौहार को ही वह बक्सा खोलता। अपनी निगरानी में उसमें रख छोड़ा घी-गुड़ माप-तौलकर शांता को देता और पुनः ताला लगा देता, जो अगले त्यौहार या किसी गाढ़े रिश्तेदार के घर आने पर ही फिर खुलता! खेती का सारा नाज-गल्ला घर में रहता और घर का खर्च गाँव में की गई सत्यनारायन कथा, महूरत, नामकरन और जिजमानों की दच्छिना पर चलाता!! मैली बंडी और एक चीकट धोती के अलावा गाँव में कभी किसी ने उसे दूसरे कपड़े में शायद ही देखा हो? कभी ससुराल-समधियाने या न्यौतहार जाता, तो धुला कुरता आधे रास्ते कंधे पर होता और लौटने पर भी... क्योंकि कुर्ता धुलने के लिए साबुन खरीदना पड़ता और साबुन खरीदने के लिए अनाज, जो उसकी सबसे बड़ी निधि थी!!!

किंतु बचपन से भूख, अभाव और अपमान के दंश झेली शांता के लिए, पुरोहित का यह तुच्छ लोभ कोई खास मायने नहीं रखता था। ...अपितु जेठानी के स्वर्ग सिधारने के बाद अपनी मेहनत और लगन के दम पर शांता, चाम से अधिक दाम और काम में प्रीति रखने वाले पुरोहित ससुर की और अधिक चहेती घरजोरू बहू बन गई थी। ...पुरोहित से किन्हीं अन्य दूसरे प्रकार के भयों का सवाल ही नहीं उठता था, क्योंकि जो संयम बड़े-बड़े रिसी-मुनी, सूर-तपसी जोग साधकर नहीं रख पाते; वह संयम, लोभ और संग्रह की प्रवृत्ति के चलते बूढ़े-विधुर हरदेव पुरोहित को पहले से ही प्राप्त था...।

लेकिन शांता के सामने इसी के समानांतर एक नया संकट आ खड़ा हुआ, जिसकी उसे सपने में भी आशा न थी। जिठानी के न रहते पिता के सिखाये संयम से चलने वाले जेठ नारायण की मानसिक स्थिति, अब गड़बड़ाने लगी थी। कुछ महीनों तक तो वह सहज रहा, किंतु अब वह देर रात गए घर लौटता और वह भी दारू में धुत्त...!

दिन शोधकर रुक्मिन के घर देवी का जागन्न प्रारंभ हो गया था। भगति-भाव से रुक्मिन माँ भगवती का जागरण कर रहे ब्राह्मन पुजारिन की सेवा-संकल्पना में जुट गई थी। वे जो माँगते देती, जो कहते करती। इधर वचन की पक्की रानी तारामती रुक्मिन के घर रैन गए देवी जागरन में सोंझिक होने के लिए तैयार होकर बैठ गई थीं। उस पर किसी चुगिल दूती ने महाराज हरीचंद के कान भर दिए कि महारानी तारामती रात्तिरी में नगर चांडाल के घर देवी जागरण में शामिल होगीं...। तब वरनाश्रम धरम को ही अपना 'सत्त' मानकर उसी मारग पर अटल रहने वाले महाराज हरीचंद; उस दिन बखत से पहले ही मूँड़ दुखने का भगरा बनाकर, महल में रानी के साथ चित्तरसारी पर जा लेटे थे। उस दिन राजा ने जान-बूझकर दो की जगह एक ही सेज बिछवाई। रानी को अपने नगीच बुलाया और उसकी बाँह के उसीसे पर अपना सिर धर आँखें बंद की और झूठ-मूठ की आह-ऊह करता सो गया।

किंतु रानी न सोईं, उसे अपना कौल पूरा करने रुक्मिन के घर जाना था। इसलिए वह खुद न सोकर राजा के सोने की बाट जोह उठीं... और संजोग देखो कि सजग राजा को भी उस घड़ी नींद की माया ने तुरंत आ घेरा। ...रानी के लिए यह उचित औसर था। उसने सोते राजा के मुख पर एक गहरी चितौन डाली और हौले से सिर के नीचे से अपनी दबी बाँह खींची और उसके नीचे तखिया लगा, अँधेरे-अँधेरे चित्तरसारी से उतर

रुक्मिन के घर की ओर निकल पड़ी थी। ...परंतु रानी का दुरभाग देखो कि वह महल से निकलकर जैसे ही मुख्य मारग पर पहुँचीं कि उसका सामना वहाँ अस्त्र-शस्त्र लिए खड़े क्रूर भयानक राहजनों से होता है। बलात राहजन रानी तारामती के अंगों के आभूषन ही नहीं लूटते अपितु रानी के पग की रतनजड़ाऊ चरन पादुकाएँ भी छीनकर ले जाते हैं। लुटी-पिटी रानी फिर भी महल नहीं लौटती और आखिरकार अपना कौल पूरा करती, रुक्मिन के यहाँ देवी जागरन में शामिल होकर ही दम लेती है।

साँझ को इंदा जग्गा पर बोए जवारों की झाँकी लेने गया हुआ था। मंदिर में ब्याह की मनौती पूरी होने की खुशी में उसने देवी के थान पर गरी-बताशे ही नहीं चढ़ाए, बल्कि भगत से कहकर वहाँ गढ़ी देवी की सबसे बड़ी साँग भी पहनी थी। ...जेठ का आजकल कोई अता-पता नहीं रहता और पति रात भींजे ही लौटेगा इसलिए रात को शांता सबको रोटी बना-खिलाकर जल्दी ही कोठरी के किवाड़ उड़काकर सो रही थी। रोज की तरह पुरोहित द्वार पर भैंस और गाय-बरदों के पास खाट डाले सोया हुआ ही था। ...पता नहीं पुरोहित की अनुभवी आँखें पहले से ही कुछ ताड़ गई थीं, या अपने भर जवानी में रड़ेंला हुए बेटे का दुख उस पर हावी था कि कुछ दिनों से उसने घर में सत्यनारायण की कथा में, माता कुंती, आज्ञाकारी पाँच पाँडव और उन सबकी एक पत्नी द्रोपदी की कथा भी शामिल कर ली थी। पुरोहित की मंशा से अंजान शांता भी बड़े ही दत्तचित्त होकर उस महान? पौराणिक गाथा का श्रवन कर उठी थी। ...जेठानी के मरने बाद उसने घर की सारी जिम्मेवारी पहले ही सम्हाल रखी थी। जब-कभी घर का फेरा लगाने आईं पुरा-पड़ौसिन भी अब उसके काम से प्रसन्न थीं और वे आपस में बतियाते हुए कुआँ-घाट उसकी बड़ाईं किए बगैर न रहती थीं - 'भई! पुरोहित कौ घर मढ़ गओ, बड़ी कमेरी बहू आई है; सिग घर मूँड़ पे धरें फिरत है...।' शांता की मेहनत और लगन के आगे अब उसके सारे ऐब दब गए थे, किंतु वह अपना एक ऐब नहीं दबा पाई थी - अपना जनीमाँस होना! और उसे इसके दबाने की कोई आवश्यकता भी न थी। किंतु जिस समाज में जनी भोग और बाँटकर खाने वाली जिंस हो और इसकी अग्या उसके धर्मग्रंथ भी देते हों, वहाँ तो उसकी यह खूबी 'ऐब' ही कही जाएगी न...?

इधर राहजन रानी के रतन-आभूषन छीनकर जैसे ही आगे बढ़े, तो नगर पेहरुओं ने उन्हें संदेह के आधार पर बंदी बना लिया और राजा के सामने ले जाकर प्रस्तुत करते

हैं। अपने नग्गर में उत्पात मचाने वाले राहजनों को राजा, तुरतै कठोर डंड की आज्ञा देता है। किंतु लूट के माल में अपनी प्राणनप्यारी रानी तारा की हीरे जड़ी खड़ाऊँ देखकर, उसका करेजा काँप गया। सेज पर जाकर देखा, जगह खाली। अकुलाया राजा बंदीगृह दौड़ा तो राहजनों ने माना कि निपट अकेली रानी को उन्होंने लूटा तो है, किंतु उसका वध नहीं किया। राजा को दूती की बात सुधि आई - 'पटरानी जू! आज रात रुकमा चंडालिन के घर देवी जागरन में जाएँगीं...?' क्रोध में राजा अगिया बेताल। लाल-ताल आँखें और फड़कते नकुआ म्यान से तरवारि निकाली और चल पड़ा रुक्मिन के घर की ओर...।

रात आधी होने को थी। घर के सारे काम निपटाकर थकी-हारी शांता, भीतर से कुठरिया की कुंडी चढ़ाए बगैर ही सो गई थी। गहरी ओंघ में कुलाँचें भरता मन का मिरग, सपनों के गूढ़ संसार में विचर उठा था। बरर्राहट की उस अबूझ दुनिया में भटकती शांता अतीत की सँकरी गलियों में जा पहुँचती है, जहाँ पाँव में घुँघरुओं की साँकर और तमाशा करने की परवशता के बीच वह घायल हिरनी सी तड़फड़ा रही है। आगे देखती है कि वह एकाएक मानुष से वन की पाखी-परेविन हो गई है। खुले आगाश में उड़ते उसके संग अब एक अन्य साथी परेवा (कबूतर) है। जिसके साथ खुशी से उड़ते-विचरते, आपस में पंखों से पंख टकरा रहे हैं। गुटरगूँ करता मन एक ही दिशा में धीरे-धीरे उड़ा जा रहा है। अतीत की दुखदायी सुधियाँ अब कहीं बिला गईं हैं।

...पर यह क्या? अचानक सामने से एक बाज प्रकट होता है और बड़े ही हिंसक तरीके से उस पर पंजे से झपट्टा मारता है। मीत परेवा बगल में नहीं है। अपने बचाव की स्थिति में एकाएक उसकी भंयकर चीख निकल गई। स्वप्नभंग की स्थिति में नींद से उठना चाहा, तो खड़ी न हो सकी। आँख खोलकर देखा तो दारू के नशे में धुत्त जेठ, ऊपर झुका पड़ा है। वह बड़े ही बहिशियाना तरीके से बाएँ हाथ से शांता का दाहिना हाथ दबाये और दाएँ से उसके वक्ष उभारों को मसल रहा है। मारे पीर शांता की आँखों की तलैयाँ भर आईं :

- 'नारायन भाऊ आऽऽप...?' तकिए की शक्ल में सिरहाने रखा दायाँ हाथ खींचकर बरजना भी चाहा, तो नारायन ने बढ़कर उसके मुँह पर हाथ रख दिया था। वह सिसकार भी न सकी। बाहर आने को भड़भड़ाते आखर, भीतर ही घुटकर रह गए :

- 'चुपकाँ पड़ीऽ रह छिनार महरिया जैसे छन-छन मतै मत करैऽ... एक भैया छप्पन भोग जीमेऽ और दूजौ लंघन करैऽ... ऐसो कौन वेद में लिख्यो है...?' नारायन ने बरजोरी करते हुए उसे चुपका रहने की धमकी दी। जबाव में शांता उससे कहना तो यह चाहती थी - 'मोटा भाऊ! झूठ को सच और सच को झूठ साबित करने के लिए तुम्हारी पोथियों में सब लिखा है, पर जब मुझे यही सब करना होता तो इस बेहड़ीले गाँव में न आती; ...अंबाजोगाई के तालुकेदार पाटिल अमीरी और ठसकई में तुमसे क्या कम थे? नुचवाती रहती वहीं रहकर उनसे अपना मन और काया...!' किंतु मुख मुँदा होने के कारण गरीबिन कुछ न बोल सकी। ...एकाएक ससुर द्वारा कुछ दिनों से उसे ही लक्ष्य कर सुनाया गया द्रोपदी और उसके पाँच पतियों में बँटने का पँवाड़ा, आँखों की सतह पर काँटों के जाल सा छा जाता है।

...मन ही मन गुनोत्तर लगाने के इक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने में लगी देर को, नारायन ने शांता की सहमति समझा। बर्फ सी सर्द-खामोश पड़ी शांता का दाहिना हाथ छोड़, अब धीरे से वह उसके साए का नाड़ा ढीला कर उठा था। किंतु पहले से चौकस शांता के लिए, संभवतः यही उचित अवसर था। ...धीरे से दायाँ पैर सिकोड़ा और खींचकर एक जोरदार लात ऊपर झुक आए नारायन के ... में जमा दी थी। नारायन 'आय-हाय-रेऽ मरिऽ गए...।' कहता खाट के पैताने से लड़खड़ाकर जमीन पर जा पड़ा था। इतने में भड़ाक से किवाड़ खोलकर शांता बाहर आ गई। ...द्वार पर लेटे पुरोहित को शायद पहले से इसकी भनक थी कि वह बदहवाश शांता को लाठी लिए खाट पर बैठा मिला! उसने जब अपनी चिमदीं आँखों से पौर की चौखट पर मूरत बनी खड़ी शांता को देखा, तो देखते ही गला खकारा - 'कोरे से टिको कोऽ ठाड़ौ हैऽ...? जा-ओ सोय जओ, मिल-जुल कै रहो और मिल-बाँट के खाओ...।' वह समझ गई कि माता कुंती की इच्छा क्या है? ... इंदा और नारायन में बँटना ही अब उसका धर्म है और इस धर्म को निबाहना ही उसका कर्तव्य। पर मन ने गवाही न दी और किसी ढीठ जानवर की तरह घूँघट की कोर दाँत से दबाए, द्वार पर अड़ी खड़ी रही। ...पर उसका यह खड़ा रहना, बहुत देर तक न हुआ। पीछे से गरियाते, लड़खड़ाते आए नारायन ने उसका फिर से पोंहचा भर लिया था। छरहरी शांता नाहर के पँजों से छूटकर भागी हिरनी सी छिटककर, आगे की दौड़ पड़ी। संभवतः जग्गा की ओर। ...जिस दिन वह ब्याहकर गाँव आ रही थी उस वक्त हवलदार का पुरा चढ़ते ही, इंदा ने जीप के बाहर

अँगुरिया के इशारे से उसे बताया था - 'वो अपनी जग्गा है। ...दो-ढाई सौ साल पहले जब यहाँ के राजा भीखमशाह ने अजनार गढ़ी पर चढ़ाई करी थी, तब वहाँ से लूटी बासठ मन चाँदी में राम-जानकी की मूत्ति भी चली आई थी; वे ही पधारे हैं वहाँ...!'

शांता भागी जा रही थी। उस घर से, जो सुरक्षा देता है, सहारा देता है। ...कोई रास्ता उसका जाना-पहचाना नहीं। जब से ब्याहकर आई है, तब से इंदा के साथ शहर-बजार भी एकाध बार ही गई है; वो भी घूँघट में। ...हाँ, अंधरे-उजेरे टट्टी-फरागत के लिए नरिया में जरूर आई-गई है; वहीं किसी जनी-माँस से एक बार उसने सुन रखा था कि खोका मैया से आगे खार चढ़त जो रत्ता पछाँह को गई है, वहीं से जात है जग्गा को...।' ...लेकिन इत्ती रात गए वहाँ कैसे पहुँचा जा सकेगा, इसका उसे कोई अनुमान न था। ...हाँ उसे जेठ-ससुर की गिरफ्त से भागना था; इसीलिए बिना आगा-पीछे देखे, लगातार आगे दौड़ी जा रही थी। ...अँधिरिया रात में छठ का चंद्रमा हँसिया के आकार में अपनी खकार सी घौली-पीली रोशनी छोड़ता, बाईं ओर खंडहर हुए जैन मंदिर की सुराहियों के पीछे धसकता जा रहा था। बगल से गुजरते पीपल, नीम, बमूर की डालियों और हींस-करील, करौंदा-पिलुओं की झाड़ियों से उठती, झींगुर-झिल्लियों की झँकार। गोह-गेहदुओं की पुकार और दूर कहीं से आती घुघ्घू-खूसटियों की हू-हू, घू-घू के बीच। खार की ऊबड़-खाबड़ कँकड़ीली धरती पर नंगे पैर दौड़ती जाती शांता को जब अपने पैरों से ही उचटा कोई कँकड़ लगता, तो भयभीत हो तेजी से आगे और आगे दौड़ पड़ती :

- 'ठनाक, ठननननन।' अचानक वह अपने सामने आई एक मनुष्य आकृति से टकरा जाती है। वह नागी थी, जो उतनी रात गए घर से बाहर लोटा लेकर टट्टी को निकली थी। शांता के एकाएक आगे आ जाने पर उसके हाथ का पानी भरा लोटा छूटकर गिर गया था - 'कौन होऽ देखकर नहीं चलती, कहाँ भागी जा रही हो...?' उसकी आवाज में क्रोध और चिंता एक साथ थी। भागने वाले ने पहले तो सुना नहीं, फिर सुना तो ऐसा लगा कि आवाज जानी-पहचानी है। ...वह एक दम पीछे मुड़ी :

- 'नागी ताईऽ?'

- 'शांताऽ... तूँ यहाँ? इत्ती रात गए... कौन लाया? कहाँ से आई? किसके साथ... बरोबर बोलना, क्या हुआ तुझेऽ!' आधी रात गए इस वीरान बीहड़ में अपनी बहन को पाकर नागी की आँखें एकाएक फटी की फटी रह गईं। दौड़कर उसने शांता की जेट भर ली तो शांता किसी भयभीत बच्चे सी उसके गले से लिपट गई और उँगली से पीछे की ओर इशारा किया - 'वोऽ, वोऽ मेरे पीछे... मुझे बचा लो ता-ईऽ...!!!' और हीक फाड़कर रो-पड़ी थी। ...नागी ने शांता के गले से छूटकर पीछे देखा, तो वहाँ कोई नहीं था। उसने हिलकी भर-भर रोती शांता की पीठ पर थपथपाकर धीर बँधाई और कुछ फर्लांग दूर टीले पर बनी अपनी मड़ैया में बाँह पकड़कर लिवा ले गई थी। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि डेढ़ साल से उसकी सगी बहन इसी गाँव में रह रही है, जबकि एक-दो बार रतिभान के घर उसे यह कहकर मिलवाया गया था कि उसका घर यहाँ से पंद्रह-बीस कोस दूर सरसई-मधूपुरा गाँव में है!!!

रानी तारामती को अपने द्वार आया देख, रुक्मिन और उसका पति अविभूत। वे कभी अपनी मड़ैया देखते, तो कभी रानी का ऐश्वर्य। उन्हें अपने नेत्तरों पर पर विश्वास नहीं बैठता कि अजुद्धिया की पटरानी उनके घर आई है। रानी तारा देहरी के बाहर तो रुक्मनि और उसका पति देहरी के भीतर। वे दोनों बहुत देर तक चित्रलिखे से ठाड़े रहे, तब रानी तारामती ने ही उनका ध्यान भंग किया - 'गृहपतियों! घर आए अतिथि को बाहिर ही खड़ा रखोगे या भीतर आने के लिए भी कहोगे...?' रानी का बोल सुनते ही वे जैसे गहरी ओंघ से जगे हों और तुरंत द्वार से एक बगल हो गए। ...मड़ैया के भीतर बोई जवा कुसुम की बारी में जगमगाती कपूर जोत और अगरु-धूम से उठती सुबास। लोंग-लोवान और पान-फूल से होती माता की अग्यारी में रानी तारामती भी, हाथ जोड़ नेत्र बंद कर वामन-भगतों के बीच जा बैठी थीं...।

अपने साथ हुए इस छल से नागिन सी फुँफकारती नागी ने मड़ैया में जाकर गहरी नींद सोए चप्पे की रजाई का खूँट जा खींचा, तो वह भड़भड़ाकर उठ बैठा। आँखें मीड़ते हुए ढिबरी के उजाले में जब उसने भन्नाई नागी के साथ सामने शांता को भी खड़ा पाया, तो मारे कायली के उसकी नार नब गई। ...किंतु वह समय लज्जित होने या तोहमत जड़ने का नहीं था। शांता पर आया संकट उन सबके सामने मुँह बाए खड़ा था। नागी ने झींकते हुए उसे शांता की सारी व्यथा-कथा सुनाई, तो वह उत्तेजित उठा - 'सारे

बम्हनाऽ जानत का हैं? लुगाई न भई गुर कौ पुआ हो गओ कि जाके हाथ आयो वई ने गुपक लओ...।' फिर दोनों बहनों को धीरज बँधाया और चुप रहने की हिदायत दे, खटिया के सिरहाने रखी बर्छी उठाई और चल दिया इंदा को खोजने।

किंतु घर की देहरी पार करते द्वार पर पाँव धरा ता बाहर का दृश्य देख, उसके हाथ के सुआ उड़ गए। द्वार पर नारायन के साथ गाँव के दस-बारह लोग हाथ में लाठी-बल्लम, टॉर्च और लालटेन लिए उत्तेजित से खड़े थे। चप्पे को बाहर आता देख, भीड़ से निकलकर ठकुरायत के रमेश तौंर ने हाथ की लाठी जमीन पर ठोकते हुँकार भरी :

- 'देख तो मनवीराऽ**...** पुरोहित की बहू जई के घर में होयगी**?** हम सब जगह छान मारी**,** कहूँऽ सुआ**-**डोरा नईं लगो**...!'**

- 'हाँऽ-हाँऽऽ... ज-ईऽ के घर में होयगी?' सबने हामी भरी। चप्पे मौन। उसके मुँह में तो जैसे मुसीका लग गया हो। ...कहे तो क्या कहे? 'हाँ' कहे तो आफत तो 'ना' कहे तो विपत। यदि उसने 'हाँ' कह दिया तो गाँव की इज्जत के नाम पर अभी, उसकी बोटी-बोटी उड़ी जाती है। ...और 'ना' का तो सवाल ही नही... 'ना' कहने पर वे अभी शांता को बाहर खींच निकालेंगे और उसके बाद घर की जो हालत होगी अनुमान लगाते ही उसकी रूह काँप गई थी। तभी रनसिंह टिकैत ने टेर लगाई :

- 'ऐऽऽऽ देखत का हो**...** भीतर ई हैऽ खेंचि लियाओ**...**।'

- 'विधायक को ट्रक क्या चलातु भैंचो, मेहतरा अपने को नखलऊ को नबाव समझन लगो है...?' चप्पा को मौन देख रामसींग सिकरवार ने मुँह का थूक निगलते अपनी अवाज मे दम भरा। उन्हें पुरोहित की भगोरिया बहू के चप्पा की मड़ैया में होने से ज्यादा इस बात की टीस है कि चप्पा न खुद ठाकुर-ब्राहमनों की टहल-बेगार करता है, न अपनी लुगाई को करने देता है! ...शहर जाय बसे विधायक को अब ठकुरायस से कोई मतलब नहीं, वे और ज्यादा या भंगिया को पुच्चक दिए हैं!! समूह पाकर रामसींग का गुप्त आक्रोश चरम पर था!!!

तभी बाहर की कुहर सुन चुकी नागी तीर की भाँति निकलकर द्वार पर आ गई थी। उसने चप्पे को अनदेखा करते उसके दो कदम आगे जाकर खड़ी हो गई थी :

- 'हाँऽ है तोऽ... हमने ब्याह इंदल से करवाया था? उसके...।'

- 'दारीऽ खसम को बचाइवे कौं झूठ बोल रई हैऽ...?'

- 'खेंचि ले सा-री कौंऽ...!'

- 'लगायदे मड़ैया में आ-गि!!'

पीछे बर्छी-भाला उठाए सिपाही-सलार और आगे हाथ में दुधारा तलवार लिए, अँधेरे में बाजरा के खेत से आगे को सिमटते चले आ रहे राजा ने, जब मशाल के उजीते में रुक्मिन के घर जाकर देखा कि 'रानी' रुक्मिन चांडालिन के साथ गलबहैयाँ डाले, हँस-हँस करके बतिया रही है! रुक्मिन का पति वारहा और बुकरा की बोटी काट-काटकर परसादी के रूप में बाँट रहा है!! और निलज्ज रानी की धृष्टता देखो कि वह उस प्रसाद को बड़े चाव के साथ खाए जा रही है!!!

क्रोध में आँधरा राजा अपना आपा खो बैठता है। उसने सीधे जाकर पहले तो रानी के सामने रखा प्रसाद जूतियों की ठोड़ से उल्ला दिया और फिर साथ चलने की कह उनकी बाँह कसकर पकड़ ली थी। अलोल रानी की सिसकी छूट गई, फिर मारे भय पीर के गुँजा हुई अँखियों भरा मुख ऊपर उठाया :

- 'यह मेरीऽ ब-ह-न हैऽ... और मेरे कहने पर ही इसने देवी जागरन किया है। ...माता रानी सबका उद्धार करती हैं?'

- 'र-ही होगीऽ... अब यह एक चां-डा-ल की स्त्री है, जिसका अन्न-जल तो दू-र उसकी छा-या भी हमारे लिए अपवित्र है; और धार्मिक कृत्य... शिव-शिव...!!!' क्रोधित राजा रानी तारा की पूरी बात अनसुनी कर बाँह पकड़ घसीटता महल की ओर ले चला।

- 'महल चलकर देखूँगा, तेरी माता रानी में कितना सत्य है...?' और उसके मौन इसारे पर वहाँ उपस्थित रह गए उसके क्रूर सैनिक...!'

- 'भैयाऽ जल्दी घरै चलो, नरायन भैया ने थोक के आदमिन के संग चप्पा की मड़ैया में आगि लगाय दई और बाकी जनीमाँस की खेंचा-कढ़ोरी करी है... पिटत भई चप्पा की लुगाई कह रही थी कि भौजी बाकी बहन हैं...?'

- 'और भौजी काँ ए...?'

- 'वई के घरै मिलीं...।'

- 'काए?'

- 'पता नहीं...।'

माता की झाँकी और अचरी सुनकर घंटा भर पहले गए इंदा के चचेरे भाई उना ने जब उसे यह खबर सुनाई, तो उसके हाथ-पाँय फूल गए। काटो तो खून नहीं। अगल-बगल कथा सुन रहे लोगों ने भी सुना तो सब सन्न। कथा में विराम लग गया और लोग गाँव की ओर दौड़ पड़े थे। इधर गुफा में साधुओं के साथ महावीरदास बाबा को जाने क्या जुंग चढ़ी कि खंजरी लेकर एक कथियाऊ जकड़ी-फाग गा उठे थे :

कासी मसान पर कालू भंगी की नौकरी करते राजा हरीचंद, सूखकर पाँजर हो गए हैं। केस और नोंह लंबे। चेहरा जर्द। आँखें खुखाल। घट भरे गंगा के तीर ठाड़े हैं। ...निबलई में देह सध नहीं रही, और घट उठता नहीं। ...तभी ऊपरे घाट पर अपने वामन मालिक के लिए जल भरने आईं, रानी तारामती दिखाई देती हैं। राजा हरीचंद दीन हो कातर सुर में उन्हें टेर लगाता है :

होऽऽऽ ठाड़े पुकारे हम बीच डगरी।

गगरी उठाय जाऽ नारि हमरीऽ...?

रानी बीच धार घड़ा भरे ठाड़े राजा की जैसे ही सूरत निरखती है, तो उसके नैन औलाती हो जाते हैं। किंतु दूसरे ही छिन राजा द्वारा चांडाल घर में पलने-ब्याहने के कारण उससे विलग कर दी गई बहन रुक्मिन की सुधि आई... अपना धरम रखने के लिए बगैर उसका मन लिए किसी निरीह जनाउर के भाँति पुत्र सहित कासी के भरे बाजार

में बेच दिया जाना याद आया, तो मन में एक गहरी टीस उठती है। ...रानी अपना क्रोध दबाए, राजा से क्या कहती है :

'पाँय पिछारूँ नाँय धरत, जो आगे बढ़े समर कौं।

राजा, आगे बढ़े समर कौंऽ...!

हम पे घड़ा मिसुर को कहिए, तुम पे घट मेहतर कौं।।

राजा, तुमपे घट मेहतर कौऽ...?'

(हे राजन ! जुद्ध में जो आगे बढ़ जाता है , वह फिर पैर पीछे नहीं धरता। आज हमारे शीश पर ब्राह्मन का घड़ा है और तुम्हारे शीश पर चांडाल का ? ... उस दिन आप अपने सत्त पर अटल थे , आज हम अपने सत्त पर !! रानी राजा का घट नहीं उठवाती और सीधी घाट से घर लौट जाती है !!!)

क्षेपक : ठाकुर-ब्राह्मणों से रार मोल लेने और मड़ैया जलने के बाद, चप्पे का तो निधारा था ही नहीं; सो विधायक के कहने पर शहर में किराए से कमरा ले नागी और बुआ के साथ, पहले की तरह अब भी ट्रक ड्रायवरी करता है। और इंदा? ...एक भंगी को साढ़ूभाई बनाकर उसका भी वहाँ गुजारा नहीं हुआ; सो अपने हिस्से की जमीन बेच, तीन नदी पार लखना के मुख्य बाजार में दुकान खोलकर हलवाईगीरी करता है। चप्पा और नागी, शांता और इंदा और उनके बच्चे एक दूसरे के घर आते-जाते हैं! भैया-भौजी, जीजा-जिज्जी और मौसा-मौसी का वहाँ भी उच्चारण होता है, पर एक नए अर्थ में!! ...और हमारा गाँव? वह... वह राजा हरिश्चंद्र की भाँति, आज भी अपने सत्य (वर्णधर्म) पर अटल है!!!

https://www.hindiadda.com/ham-pe-ghada-misur-kau-kahie-tum-pe-ghat-mehatar-kau/